अध्याय : 9

योग शिक्षण की पद्धतियाँ

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिननस्तत्त्वदर्शिनः।। गीता– 4/34

अर्थात : उस ज्ञान को तूझे तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझना चाहिए। उनको भलीभाँति दण्डवत् प्रणाम करने, उनकी सेवा करने और कपट छोड़कर सरलता पूर्वक प्रश्न पूछने पर वे परमात्वत्तत्व को भलीभाँति जानने वाले ज्ञानीजन तुझे उस तत्व ज्ञान का उपदेश करेंगे–

गीता के उपरोक्त श्लोक में विद्यार्थी गुरू से किस प्रकार जुड़े या व्यवहार करे या अधिक निकट आये का परामर्श दिया गया है। इस परामर्श में तीन बातें स्पष्ट की गयी हैं:

1. भली भाँति दण्डवत् प्रणाम
2. सहज भाव से प्रश्न
3. सेवा

शिष्य को गुरू के सानिध्य या निकटता या गुरूकृपा से ही ज्ञान की प्राप्ति होगी और इस निकटता को दृढ़ करने के लिए शिष्य को गुरू के प्रति उपरोक्त तीनों कार्यों को करना चाहिए। इनसे गुरू निकटता और ज्ञान की प्राप्ति होगी।

"वे आत्मस्वरूप का साक्षात्कार किये हुए ज्ञानी महात्माजन प्रणामादि के द्वारा सेवा की जाने पर ज्ञान की जिज्ञासा से प्रश्न करते ही तेरा आशय समझ कर (तेरी सच्ची जिज्ञासा) जानकर तुझे तत्व ज्ञान का उपदेश करेंगे।"

"साक्षात्कृतात्मास्वरूपाः तु ज्ञानिनः प्रणिपातादिभितः सेविताः ज्ञानबुभुत्सया, परितः पश्च्छतः तव आशयम् अलक्ष्य ज्ञानिम् उपदेक्ष्यन्ति" (श्रीमद्भगवद्गीता–श्रीरामानुजभाष्य 4/34)

रामानुज की उपरोक्त व्याख्या स्पष्ट करती है कि ज्ञानी गुरू अर्थात् सम्बन्धित विषय का मर्मज्ञ से

उस विषय का ज्ञान मिलने में समय नहीं लगता यदि विद्यार्थी उपरोक्त तीनों अर्थात् प्रणाम, सहज भाव से प्रश्न और सेवा को व्यवहार में लायें। इस प्रकार ये तीनों व्यवहार में आने वाली बातें योग अभ्यास की दृष्टि से शिष्य–गुरू या विद्यार्थी और शिक्षक के मध्य अनुष्ठानीय है।

यहाँ नैतिक मूल्यों एवं एक सामान्य व्यवहार की भी शिक्षा मिलती है क्योंकि ये तीनों बातें शास्त्र निहित और प्रतीक जीवन का हिस्सा है। भारतीय संस्कृति में अपने वरिष्ठ, माता–पिता और गुरू के प्रति प्रणाम सेवा करना और किसी विषय की जिज्ञासा होने उसे उनके सन्मुख प्रकट करना तो आवश्यक माना जाता है।

आचार्य शंकर के अनुसार इस श्लोक में ज्ञान प्राप्ति की विधि बतायी गयी है। इस श्लोक की व्याख्या में शंकराचार्य कहते हैं "वह ज्ञान जिस विधि से प्राप्त होता है वह तू जान यानी सुन। आचार्य के समीप जाकर भली भाँति दण्डवत प्रणाम करने से एवं किस तरह बन्धन हुआ है? कैसे मुक्ति होगी? विद्या कया है? अविद्या क्या है? इस प्रकार निष्कपट भाव से प्रश्न करने से और गुरू की यथायोग्य सेवा करने से वह ज्ञान प्राप्त होगा।"

अतः गुरू या शिक्षक से ज्ञान प्राप्त करने की विधि उसको प्रणाम करके जिज्ञासापूर्वक विनम्र भाव से प्रश्न करना और सेवा करना है।

डॉ0 राधाकृष्णन इस श्लोक की व्याख्या में कहते हैं:

" ज्ञानी लोग हमें सत्य का उपदेश तभी करेंगे, जबकि हम उनके पास सेवा की भावना और आदरपूर्वक जिज्ञासा के साथ जाएं जब तक अपने अन्दर स्थित परमात्मा का अनुभव न कर लें, तब तक हमें उनके लोगों की सलाह के अनुसार कार्य करना चाहिए, जिन्होंने परमात्मा का अनुभव प्राप्त कर लिया है।"[1]

"तद् विजानीहि येन विधिना प्राप्तेज्ञति आचार्यन् अभिगम्य प्रणिपातेन प्रकर्षेण नीचैः पतनं प्रणिपातो दीर्घनमस्कारः तेन कथं बन्धः अथं मोक्षः का विद्या च अविद्या इति परिप्रश्नेन सेवया गुरू शुश्रूषया।"
(श्रीमद्भगवत्गीता, शांकरभाष्य 4/34)

उपरोक्त व्याख्या से एक बिन्दु स्पष्ट होता है कि जो जिसका विषय का मर्मज्ञ है वही उसका आधिकारिक उपदेशक है। ऐसे व्यक्ति से सेवा एवं आदर के द्वारा ही ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

सेवा के महत्व को बताते हुए डॉ0 राधाकृष्णन कहते हैं: "सेवा और आत्मविलोम के गुणों द्वारा हम बाधा डालने वाले संस्कार को चूर–चूर कर देते हैं। और ज्ञान के आलोक को अपने तक पहुँचने देते हैं।"[2]

"हमें अतीत के महान विचारकों के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ना चाहिए, उसके विषय में तर्क–वितर्क करना चाहिए और अन्तर्दृष्टि द्वारा उनमें जो कुछ स्थायी मूल्य की वस्तु है, उसे हृदयंगम करना चाहिए।"[3]

"जिन लागों ने सत्य का अनुभव कर लिया है, उनसे आशा की जाती है कि वे हमें मार्ग दिखलायेंगे। जिन्होंने तत्व का दर्शन कर लिया है, उनका अपने अपेक्षाकृत कम भाग्यशाली बन्धुओं के

प्रति कुछ कर्तव्य हो जाता है, और वे उन्हें उस ज्ञान के आलोक को प्राप्त करने का मार्ग दिखाते हैं, जिस तक वे स्वयं पहुँच चुके हैं।"[4]

इस प्रकार राधाकृष्णन इस श्लोक की .. में सुस्पष्ट कर देते हैं कि ज्ञान प्राप्ति के लिए शिष्य और गुरू मध्य कैसा सम्बन्ध होना चाहिए। यह एक पक्षीय नहीं दो पक्षीय है अतः

(1) शिष्य को गुरू के प्रति आदर, सम्मान के साथ प्रणाम कर जिज्ञासा भाव से प्रश्न करना चाहिए। सेवा करनी चाहिए।

(2) ज्ञानी या विषय के मर्मज्ञ के अपने से कम जानकारों के प्रति कुछ कर्तव्य हैं अतः उन्हें शिष्य को उसका उपदेश करना चाहिए।

(3) ज्ञान के लिए दोनों के मध्य तर्क–वितर्क के साथ चर्चा होनी चाहिए ऐसा नहीं होना चाहिए कि शिष्य शंका में रहते हुए भी गुरू से कुछ पूछ न सके और वह उसे जिस रूप में समझ रहा है उसे ही मान ले या उसे जैसा समझाया जा रहा है वैसा ही स्वीकार कर ले। इस प्रकार राधाकृष्णन की व्याख्या शिष्य, गुरू और इन दोनों के मध्य स्थापित होने वाले सम्बन्ध का स्पष्ट विश्लेषण कर तीनों कर्तव्य/लक्षण चिन्हित किये हैं।

अभ्यास–प्रश्न

1. गीता के अनुसार सीखने के लिए दिये गये परामर्श के मुख्य विन्दु क्या हैं?

(क) प्रश्न पूछना (ख) गुरु के प्रति आदर
(ग) गुरु सेवा (घ) उपरोक्त सभी

2. शिष्य की दृष्टिकोण से एक प्रयोगिक विषय के लिए आवश्यक तत्व क्या होते हैं?

(क) निरीक्षण (ख) प्रदर्शन
(ग) अभ्यास एवं भूल करो और सीखो (घ) सभी

3. प्राचीन काल में सीखने की सर्वोत्तम विधि क्या थी?

(क) गुरु के सानिध्य में रहना। (ख) पुस्तकों का अध्ययन
(ग) विद्यालय जाना (घ) सभी

4. प्राचीन काल के शिक्षण–प्रशिक्षण में मुख्य बातें क्या नहीं शामिल थी?

(क) तर्क, चर्चा एवं वाद–विवाद (ख) गुरु शिष्य के बीच उत्तम सम्बन्ध
(ग) सह अध्ययन की भावना (घ) अधिकांश कार्य लेखन में होता था